Dr Piali Biswas
Dept of commerce

प्रस्तावना
(INTRODUCTION)

भारत एक कृषि प्रधान देश है। इसकी अर्थव्यवस्था कृषि प्रधान होते हुए भी इसे खाद्यान्न की आपूर्ति के लिए अनेक बार संयुक्त राज्य अमेरिका, आस्ट्रेलिया, कनाडा, मैक्सिको आदि देशों का मुँह ताकना पड़ा है। सन् 1997 के प्रारम्भ में ही इसे आस्ट्रेलिया से हजारों टन गेहूँ का आयात करना पड़ा था। इसका कारण यह था कि स्वाधीनता के पूर्व भारत अँग्रेजों का उपनिवेश था, अतः कृषि क्षेत्र में वे ही फसलें पैदा की जाती थीं जिन्हें अंग्रेज अपने राष्ट्र (इंगलैण्ड) की अर्थव्यवस्था के लिए पोषक मानते थे। इसका परिणाम यह हुआ कि खाद्य फसलों की अपेक्षा अखाद्य फसलें बहुत अधिक उगाई जाती रहीं। इन अखाद्य फसलों को '**नकद दाम की फसलें**' कहा जाता था। इन फसलों में गन्ना, कपास, चाय, कॉफी, तम्बाकू आदि प्रमुख थे नकद दाम की फसलों के बाहुल्य के कारण खाद्य फसलों की उपेक्षा की गई। परिणाम यह हुआ कि भारत कृषि प्रधान अर्थव्यवस्था वाला देश होते हुए भी खाद्यान्न उत्पादन में पिछड़ गया और अपने यहाँ के लोगों का पेट भरने के लिए उपनिवेशवादी और विकसित देशों का मोहताज बन गया।

उपनिवेशवादियों ने अपने देश के उद्योगों के पोषण के लिए भारत की कृषि संरचना ऐसी कर दी कि स्वाधीनता प्राप्ति के बाद भी उनकी कृषि दीन-हीन दशा में ही नहीं रही वरन् वह देश की बढ़ती हुई जनसंख्या के दबाव से इतनी अधिक अपंग बन गई कि आजादी के सपने धूमिल हो गए। 'पर्याप्त भोजन के बिना भारत द्वारा मानवीय कल्याण, सामाजिक न्याय तथा लोकतन्त्र स्थापित करने की सभी आशाएँ पूर्ण होना सम्भव नहीं था।' भारत के कृषि क्षेत्र में खाद्यान्नों का स्थान सर्वोपरि है। यह वह आधार है जिस पर केवल कृषि क्षेत्र ही नहीं वरन् सम्पूर्ण अर्थव्यवस्था का चक्र घूमता है। खाद्यान्नों का पर्याप्त उत्पादन जहाँ एक ओर मानव की आधारभूत आवश्यकताओं की पूर्ति करता है, वहीं दूसरी ओर, देश के आर्थिक, राजनीतिक और सामाजिक स्थायित्व एवं समृद्धि के लिए भी आवश्यक है।

भारतीय अर्थव्यवस्था में कृषि का महत्व
(IMPORTANCE OF AGRICULTURE IN INDIAN ECONOMY)

भारतीय अर्थव्यवस्था में कृषि का विशेष महत्व प्राचीनकाल से रहा है। आज भी इस तथ्य को अस्वीकार नहीं किया जा सकता है। इस कथन में कोई अतिश्योक्ति नहीं है कि कृषि देश के लोगों का मात्र जीविकोपार्जन का साधन ही नहीं है, वरन् भारतीय अर्थव्यवस्था की रीढ़ है। देश के विभिन्न उद्योग-धन्धे, विदेशी मुद्रा का अर्जन, विभिन्न लोक कल्याणकारी परियोजनाएँ आदि कृषि पर ही आधारित हैं। देश का राजनैतिक स्थायित्व कृषि के उत्पादन पर ही निर्भर करता है।

भारत में कृषि का महत्व निम्नानुसार स्पष्ट किया जा सकता है—

1. **सर्वाधिक रोजगार प्रदान करने का स्रोत**—भारतीय कृषि 56.0% कार्यशील जनसंख्या को प्रत्यक्ष रूप से रोजगार प्रदान करने का स्रोत है। इससे मात्र करोड़ों लोग अपनी जीविकोपार्जन ही नहीं कर रहे हैं, वरन् इतने ही और लोग कृषि व्यवसाय व उससे सम्बन्धित कार्यों एवं उद्योगों में लगे हुए हैं।

Scanned with CamScanner

2. **राष्ट्रीय आय का मुख्य साधन**—कृषि भारत की आय का मुख्य साधन है। इसका राष्ट्रीय आय में सदैव महत्वपूर्ण योगदान रहता है। देश की सम्पूर्ण राष्ट्रीय आय में कृषि एवं उससे सम्बन्धित कार्यों का भाग औसतन 45% रहता था किन्तु वर्ष 2005-06 में यह प्रतिशत घटकर 18.5% प्रतिशत रह गया है।

3. **अनेक उद्योगों का मूलाधार**—भारत के अनेक महत्वपूर्ण उद्योगों को कृषि उपज पर ही निर्भर रहना पड़ता है; क्योंकि उद्योगों को कच्चा माल कृषि कार्य एवं उपज द्वारा ही प्राप्त होता है। सूती वस्त्रों हेतु कपास और चीनी मिलों को गन्ना कृषि द्वारा ही उपलब्ध कराया जाता है। चाय, कॉफी, रबड़, पटसन, वनस्पति घी, तिलहन उद्योग आदि सभी कच्चे माल के लिए कृषि पर ही निर्भर रहते हैं।

4. **खाद्यान्नों की पूर्ति**—भारत में एक अरब दो करोड़ सत्तर लाख लोग निवास करते हैं। इनकी खाद्यान्नों की आवश्यकता की पूर्ति भारतीय कृषि द्वारा ही होती है। यद्यपि भारत अब खाद्यान्नों की पूर्ति हेतु आत्मनिर्भर हो गया है। किन्तु अनेक बार आकस्मिक संकट इसकी आत्मनिर्भरता पर प्रश्न चिह्न लगा देते हैं। उदाहरणार्थ—वर्ष 1996-97 में भारत को हजारों टन गेहूँ आस्ट्रेलिया से आयात करना पड़ा था।

5. **राजस्व प्राप्ति में योगदान**—सरकार को कृषि क्षेत्र से पर्याप्त राजस्व प्राप्त होता है। अनुमान लगाया जाता है कि प्रतिवर्ष करोड़ों रुपए सरकार को कर-राजस्व के रूप में प्राप्त होते हैं। इसके अतिरिक्त कृषि आयकर एवं कृषि उपज से निर्मित वस्तुओं के निर्यात पर 'निर्यात कर' से भी सरकार को करोड़ों रुपयों की आय प्राप्त होती है। इस प्रकार कृषि का राजस्व प्राप्ति में महत्वपूर्ण योगदान है।

6. **विदेशी व्यापार में महत्व**—भारतीय कृषि का विदेशी व्यापार में भी महत्वपूर्ण योगदान है। यह विदेशी मुद्रा अर्जन में बहुत सहायक सिद्ध होती है। सरकार प्रत्येक वर्ष कुल निर्यात का लगभग 48% निर्यात कृषि पदार्थ एवं कृषि से सम्बन्धित कच्चे पदार्थों पर आधारित उद्योगों द्वारा निर्मित वस्तुओं का करती है।

7. **कृषि से पशुपालन में सहयोग**—वर्ष 1989 की पशु गणना के अनुसार देश में लगभग 44 करोड़ पशुधन है, इनको खिलाने के लिए प्राकृतिक चारा व घास के अतिरिक्त भूसा-भूसी और अनाज की आवश्यकता पड़ती है। कृषि के माध्यम से ये सभी वस्तुएँ सरलता से प्राप्त हो जाती हैं। यदि कृषि क्षेत्र से ये वस्तुएँ प्राप्त न हों तो पशुपालन अत्यधिक कठिन हो जाये।

8. **अन्तर्राष्ट्रीय जगत में महत्वपूर्ण स्थान**—अन्तर्राष्ट्रीय जगत में भारत को महत्वपूर्ण स्थान दिलाने में कृषि का उल्लेखनीय स्थान है। अनेक महत्वपूर्ण कृषि उपजों के कारण भारत के कई पश्चिमी राष्ट्रों से घनिष्ठ व्यापारिक सम्बन्ध स्थापित हो गए हैं।

9. **सरकार के बजट पर प्रभाव**—भारतीय कृषि मानसून पर निर्भर है। यदि मानसून यथासमय यथेष्ट मात्रा में आ जाता है तो कृषि उत्पादन पर्याप्त मात्रा में हो जाता है जिससे खाद्यान्नों की पूर्ति ही सम्भव नहीं होती वरन् उद्योगों को भी अपेक्षित कच्ची सामग्री उपलब्ध हो जाती है। यदि कृषि फसलें अच्छी होती हैं तो ऐसी स्थिति में केन्द्रीय व राज्य सरकारों के बजट सम्पन्नता का दृष्टिकोण अपनाकर बनाये जाते हैं और धन को विकास कार्यों में व्यय करने की व्यवस्था की जाती है किन्तु यदि कृषि की असफलता या न्यूनता के संकेत मिलते हैं या अकाल की स्थिति निर्मित हो जाती है तो सरकार को राहत और सहायता कार्यों में व्यय हेतु बहुत अधिक धनराशि का बजट में प्रावधान करना पड़ता है, जैसा कि प्रति वर्ष देश के किसी न किसी भाग में भयंकर सूखा पड़ता रहता है जिसके विपरीत परिणाम विकास कार्यों पर पड़ते हैं। चूँकि भारत एक कृषि प्रधान देश है अतः सरकार को कर एवं अन्य नीतियाँ भी कृषि उपज की न्यूनता या सम्पन्नता को ध्यान में रखते हुए बनानी पड़ती हैं।

भारतीय कृषि की विशेषताएँ
(CHARACTERISTICS OF INDIAN AGRICULTURE)

भारतीय कृषि की प्रमुख विशेषताएँ निम्नलिखित हैं—

1. **जीवन निर्वाह कृषि**—भारतीय कृषि सदियों से जीवन-निर्वाह कृषि रही है। स्वतन्त्रता के बाद से भारतीय कृषि का स्वरूप बहुत अधिक बदल गया है। स्वतन्त्रता के बाद के वर्षों में भारत में कृषि का उत्पादन कई गुना बढ़ा है। सिंचित क्षेत्र में भी पर्याप्त वृद्धि हुई है। कृषि में ट्रेक्टरों और आधुनिक यन्त्रों का उपयोग होने लगा है। उर्वरकों और कीटनाशकों का उपयोग पर्याप्त मात्रा में बढ़ गया है। कुछ क्षेत्रों में कृषि का स्वरूप व्यापारिक बनता जा रहा है। अधिकांश किसान आज भी जो पैदा करते हैं, उसका उपभोग स्वयं कर लेते हैं। उनके पास बेचने के लिए बहुत कम अनाज बचता है। राष्ट्रीय आय का केवल 18.5% भाग ही कृषि से प्राप्त होता है, जबकि इसमें देश की कुल जनसंख्या का दो-तिहाई हिस्सा कार्यरत है।

2. **मृदा में उर्वरा शक्ति का अभाव**—भारतीयों का प्राचीनतम उद्यम कृषि है। पिछले हजारों वर्षों से यहाँ खेती हो रही है। प्रतिवर्ष उसी भूमि पर निरन्तर खेती होते रहने से मृदा की उर्वरा शक्ति कम हो गई है। देश में उर्वरकों का उपयोग अपेक्षाकृत कम होता है। फलतः भूमि में नाइट्रोजन की बहुत कमी पड़ जाती है। देश में रासायनिक उर्वरकों का उत्पादन अभी

Scanned with CamScanner

हाल ही में आरम्भ हुआ है। दूसरे, प्रत्येक किसान पूँजी के अभाव में इनका प्रयोग नहीं कर पाता है। यहाँ की मृदा में औसत रूप से 03 से 07 प्रतिशत तक नाइट्रोजन तथा 6 प्रतिशत कार्बन पाया जाता है। इस प्रकार भारत की मिट्टी में उर्वरा शक्ति की कमी पाई जाती है।

3. **कृषि पर जनसंख्या का भारी दबाव**—जनसंख्या की दृष्टि से भारत में कृषि भूमि का अभाव है। जनसंख्या के दबाव के फलस्वरूप प्रति व्यक्ति पर खेती योग्य भूमि का औसत बहुत कम है तथा खेतों का औसत आकार भी बहुत कम हो गया है। जनसंख्या की तीव्र वृद्धि के कारण खेतों का आकार निरन्तर और भी छोटा होता जा रहा है। खेतों का छोटा आकार कृषि उत्पादन की वृद्धि में बहुत अधिक बाधक होता है। आधुनिक कृषि-यन्त्रों का उपयोग छोटे खेतों में सम्भव नहीं हो पाता है। अतः देश का छोटा किसान प्रारम्भ से लेकर आज तक पिछड़ा हुआ है और निर्धन बना हुआ है।

4. **प्रति हैक्टेयर उत्पादन कम होना**—भारत में कृषि की प्रति हैक्टेयर उपज बहुत कम है। यहाँ उपज कम होने के अनेक कारण हैं। जैसे—यहाँ कृषि विधियाँ एवं यन्त्र अधिकांशतः पुराने ढंग के हैं। नई कृषि तकनीक तथा आधुनिक कृषि-यन्त्रों का प्रयोग भारतीय खेतों में अभी बहुत कम किया जाता है। इसी प्रकार घटिया बीजों तथा अच्छे उर्वरकों के अभाव में प्रति हैक्टेयर उत्पादन कम होता है। कृषि उत्पादों को बेचने की असुविधाएँ तथा परिवहन साधनों के अभाव ने भारतीय किसानों के उत्साह को और भी कम कर दिया है। इससे भी कृषि उत्पादन कम होता है।

5. **मृदा अपरदन**—वनों की अन्धाधुन्ध कटाई, अति चराई और यदा-कदा होने वाली भारी वर्षा से व्यापक रूप से मृदा अपरदन होता रहता है। भारत में लाखों हैक्टेयर भूमि अपरदन से प्रभावित है। इसमें लाखों हैक्टेयर परती तथा अकृषित भूमि है। लगभग 200 लाख हैक्टेयर मरुभूमि है जो मुख्यतः राजस्थान में पड़ती है। वर्षा की न्यूनतम मात्रा एवं तीव्रता, अनियन्त्रित पशुचारण तथा वायु वेग से मिट्टी का अपरदन निरन्तर हो रहा है। कृषि विकास के लिए इसकी रोकथाम आवश्यक है।

6. **भारतीय किसानों का भाग्यवादी एवं रूढ़िवादी होना**—भारतीय किसान परिश्रम की अपेक्षा भाग्य पर अधिक विश्वास करता है। इसी कारण वह कम पुरुषार्थ करता है। रूढ़िवादी होने के कारण वह कृषि की नई विधियों को नहीं अपनाता। अशिक्षित एवं अप्रशिक्षित होने के कारण उनको नई कृषि विधियों एवं नए कृषि उपकरणों का ज्ञान भी नहीं रहता है। लेकिन यह स्थिति अब धीरे-धीरे बदल रही है।

7. **सिंचाई तथा पूँजी की अपर्याप्तता**—भारत में मानसूनी वर्षा होती है। अविश्वसनीयता एवं अनिश्चितता जिसकी दो प्रमुख विशेषताएँ हैं। अतः भारत में कृषि के विकास के लिए पर्याप्त सिंचाई सुविधाएँ होनी आवश्यक हैं, किन्तु भारत में अभी तक सिंचाई की पर्याप्त व्यवस्था नहीं हो पाई है। आज भी भारत में ऐसे अनेक क्षेत्र हैं जहाँ जल के अभाव के कारण फसलें नहीं उगाई जा सकतीं। मार्च 2006 तक कुल कृषित भूमि में से 162.85 हजार हैक्टेयर भूमि पर ही सिंचाई की व्यवस्था उपलब्ध है। दूसरे, भारतीय किसान के पास धन की अत्यधिक कमी है। अधिकांश किसान आज भी अपना जीवन-निर्वाह बहुत कठिनाई से कर पा रहे हैं। ऐसी दशा में, वे खेतों के लिए अच्छे बीज, खाद तथा सिंचाई की व्यवस्था कैसे कर पायेंगे। अतः पूँजी की कमी की समस्या का समाधान करना आवश्यक है।

8. **ऋतुओं के अनुसार फसलें उगाना**—भारत में फसलों के तीन प्रमुख मौसम हैं—खरीफ, रबी तथा जायद। चावल, ज्वार-बाजरा, मक्का, कपास, तिल और मूँगफली खरीफ की मुख्य फसलें हैं और गेहूँ, जौ, चना, सरसों तथा राई रबी की फसलें हैं। जायद फसलों में ग्रीष्म ऋतु में पैदा होने वाले फल, सब्जियाँ; जैसे—खरबूजा, तरबूज, ककड़ी, तुरई आदि फसलें आती हैं।

9. **विभिन्न प्रकार की कृषि**—भारत में प्राकृतिक दशा, जलवायु में प्रादेशिक विविधता तथा विभिन्न प्रकार की मिट्टियाँ पाई जाती हैं। फलतः यहाँ विभिन्न प्रकार की कृषि की जाती है। उदाहरणार्थ—शुष्क खेती पश्चिम उत्तर प्रदेश, महाराष्ट्र, राजस्थान तथा गुजरात में की जाती है और आर्द्र खेती गंगा के मध्यवर्ती मैदान तथा मध्य प्रदेश में की जाती है। इसी प्रकार, सिंचित कृषि गंगा के पश्चिमी मैदान, उत्तर तमिलनाडु तथा दक्षिण भारत की नदियों के डेल्टा प्रदेशों में की जाती है और स्थानान्तरी कृषि असम, मध्य प्रदेश तथा पश्चिम घाट के पर्वतीय प्रदेशों में की जाती है, जहाँ भारत की जन-जातियाँ निवास करती हैं।

10. **फसलों की गहनता**—फसलों की गहनता से तात्पर्य यह है कि एक खेत में एक कृषि वर्ष में कितनी फसलें उगाई जाती हैं। इससे भूमि के उपयोग की क्षमता का ज्ञान हाता है। एक कृषि वर्ष में जितनी अधिक फसलें उगाई जायेंगी, भूमि की उपयोग क्षमता उतनी ही अधिक मानी जाती है। इससे कृषि क्षेत्रों में अधिक उत्पादन प्राप्त होता है। देश की बढ़ती हुई जनसंख्या के लिए खाद्यान्न की आपूर्ति फसलों की गहनता विधि से की जा सकती है। विस्तृत कृषि में कृषि उत्पादन बहुत कम प्राप्त होता है।

फसलों की गहनता की सफलता सिंचाई की समुचित व्यवस्था, उर्वरकों का प्रचुर मात्रा में उपयोग तथा यान्त्रिक कृषि पर निर्भर है। इस विधि में छोटे वर्धनकाल वाली फसलें उगाई जा सकती हैं।

Scanned with CamScanner

11. **मिश्रित कृषि**—भारत में कृषि कार्य में पशु किसान का सदैव से बहुत सहयोगी रहा है। बैल, भैंसे कृषि कार्य में सहायता करते हैं। गाय, भैंस, बकरी आदि पशु दूध के लिए पाले जाते हैं। इस प्रकार भारत के लगभग प्रत्येक क्षेत्र में मिश्रित कृषि होती है। अब बहुत से किसान मुर्गी पालन भी करते हैं। अतः खाद्यान्नों के साथ-साथ चारे की फसलें भी उगाई जाती हैं।

12. **शस्यावर्तन**—शस्यावर्तन या फसलों की हेर-फेर प्रणाली में फसलों को एक ही खेत में एक के बाद एक क्रमबद्धता में बोते हैं। भारतीय किसान इस प्रणाली से भली-भाँति परिचित हैं। इससे भूमि की उर्वरा-शक्ति बनी रहती है क्योंकि कुछ फसलें भूमि के उन पोषक तत्वों को लौटा देती हैं जिनको दूसरी फसलें अपने पोषण हेतु निकाल लेती हैं। इस प्रकार भूमि को परती छोड़ने की आवश्यकता कम पड़ती है तथा उत्पादन में भी वृद्धि होती है।

13. **फसलों का साहचर्य**—भारतीय किसान फसलों को मिलाकर बोते हैं, इसको फसलों की 'साहचर्य प्रणाली' कहते हैं। इन फसलों की मिश्रित प्रणाली में फसलों को इस प्रकार मिलाकर बोया जाता है कि जो पोषक तत्व एक फसल द्वारा कम हो जाते हैं, दूसरी फसल से वे पूरे हो जायें। इन फसलों का वर्धनकाल पृथक्-पृथक् होता है, अतः इनको बोया तो एक साथ जाता है परन्तु इनके काटने का समय अलग-अलग होता है। उदाहरणार्थ—गेहूँ के साथ सरसों मिलाकर बोई जाती है। इसमें सरसों शीघ्र पक जाती है और गेहूँ देर से पकता है। इसी प्रकार ज्वार-बाजरा के साथ दालों की फसलें बोई जाती हैं। ऐसा देखा गया है कि किसान एक फसल के काटने की तैयारी करता है तो दूसरी फसल सम्भवतया उगनी आरम्भ होती है।

इस प्रणाली में किसान को आर्थिक हानि होने की सम्भावना कम रहती है। मिश्रित फसलों के बाजार भाव अलग-अलग होते हैं। ऐसा हो सकता है कि एक फसल का बाजार भाव कम हो और किसान को कम आय हो, किन्तु दूसरी फसल का बाजार भाव अधिक होने से अधिक आय होने पर पहली फसल से होने वाला घाटा पूरा हो जाता है।

Scanned with CamScanner

भारतीय कृषि की समस्याएँ
(PROBLEMS OF INDIAN AGRICULTURE)

सन् 1991 की जनगणना के अनुसार देश की कुल जनसंख्या का 52.1% भाग कृषि कार्य में लगा हुआ है किन्तु इसके बाद भी भारतीय कृषि की स्थिति बहुत अधिक अच्छी नहीं है। देश के आधे से अधिक किसानों के पास बहुत कम मात्रा में भूमि है जिससे भारतीय कृषक की आय मात्र इतनी ही है कि वह उससे अपना और अपने परिवार का जीवन-यापन ही कर पाता है। कृषि उसके लिए लाभप्रद व्यवसाय नहीं है। भारतीय कृषक के सम्मुख सदैव पूँजी की भारी कमी बनी रहती है और वे अपनी कृषि योग्य भूमि में उसकी आवश्यकता के अनुसार पूँजी का विनियोग नहीं कर पाते हैं। पूँजी विनियोग के लिए उन्हें निरन्तर ऋण लेना पड़ता है, परिणामस्वरूप किसान सदैव ऋणग्रस्त बना रहता है। किन्तु इन समस्याओं के बाद भी स्वतन्त्रता के बाद भारत ने कृषि क्षेत्र में अनेक उल्लेखनीय सफलताएँ अर्जित की हैं, उत्पादन में वृद्धि भी की है और अनेक खाद्यान्नों के मामले में वह लगभग आत्मनिर्भरता की स्थिति में है। किन्तु इसके बावजूद भी भारतीय कृषि के सम्मुख आज भी अनेक समस्याएँ विद्यमान हैं।

इन समस्याओं का विवेचन निम्नानुसार है—

(अ) प्राकृतिक कारण

(1) **भूमि-क्षरण की समस्या**—भारतीय कृषि-भूमि की अनेक समस्याएँ हैं, उनमें से एक प्रमुख समस्या भूमि-क्षरण की है। इससे प्रतिवर्ष हजारों टन उपजाऊ मिट्टी बाढ़ के पानी में बह जाती है अथवा हवा में उड़ जाती है तथा कृषि उत्पादन कम हो जाता है। इससे हजारों एकड़ भूमि कृषि की दृष्टि से बेकार भी हो जाती है।

समस्या का समाधान—भूमि-क्षरण को रोकने के लिए अनेक उपाय किए जा सकते हैं; जैसे—वृक्षारोपण करना, वनों के काटने पर प्रतिबन्ध लगाना, नवीन वन लगाना, प्रवाहित जल के वेग को रोकने के लिए खंदक खोदना, पानी के निकास को ठीक करना आदि।

(2) **फसलों के रोग और शत्रुओं की समस्या**—देश में प्रतिवर्ष हजारों टन अनाज फसल की बीमारियों, चूहों, टिड्डियों, कीटाणुओं द्वारा नष्ट कर दिया जाता है। एक अनुमान के अनुसार प्रतिवर्ष कुल उपज का लगभग 5 प्रतिशत अनाज टिड्डियों द्वारा नष्ट कर दिया जाता है। इसके अतिरिक्त गोदामों में अनाज को रखने पर भी अनाज का 5 से 20 प्रतिशत भाग कीटाणुओं द्वारा नष्ट कर दिया जाता है।

समस्या का समाधान—कीटाणुओं को नष्ट करने के लिए कीटनाशक औषधियों का प्रयोग किया जाना चाहिए। पशुओं से फसल की रक्षा करने के लिए खेतों के चारों ओर मेढ़ आदि की व्यवस्था की जानी चाहिए। इसके अतिरिक्त आकाशवाणी एवं टी. वी. द्वारा समय-समय पर फसलों में लगने वाली बीमारियों के विषय में कृषकों को सूचनाएँ प्रसारित होती रहनी चाहिए, और कृषकों को उन सूचनाओं का पालन करना चाहिए।

(3) **प्राकृतिक प्रकोपों एवं प्रकृति पर निर्भरता की समस्या**—भारतीय कृषि की एक प्रमुख समस्या उसका प्रकृति पर निर्भर होना है, समय-समय पर प्राकृतिक प्रकोपों द्वारा होने वाले विनाश की समस्या भी उसके लिए प्रमुख है। कभी-कभी देश में मानसून जल्दी आ जाता है, तो कभी देर से आता है कभी देश में कम वर्षा होती है तो कभी अधिक वर्षा हो जाती है। कभी देश में भीषण सूखा पड़ जाता है तो कभी भयंकर बाढ़ आ जाती है। कभी फसलों को पाला मार जाता है तो कभी लहलहाती फसलों को ओले नष्ट कर देते हैं। इस प्रकार कोई न कोई प्राकृतिक समस्या कृषि के लिए सदैव बनी रहती है।

समस्या का समाधान—कृषि की मानसून पर निर्भरता को कम करने के लिए देश में सिंचाई के साधनों का विकास किया जाना चाहिए। बाढ़-नियन्त्रण हेतु बाँधों का निर्माण किया जाना चाहिए। वनों को कटने से रोका जाना चाहिए।

(ब) संस्थागत समस्याएँ

(1) **जोतों के उप-विभाजन एवं विखण्डन की समस्या**—खेतों के उप-विभाजन का अर्थ कृषि योग्य भूमि का छोटे-छोटे टुकड़ों में विभाजित होने से है तथा विखण्डन का अर्थ कृषि योग्य भूमि का एक ही स्थान पर न होकर विभिन्न स्थान पर दूर-दूर होना है। भारत में उप-विभाजन एवं विखण्डन के अनेक कारण हैं; जैसे—उत्तराधिकार कानून, संयुक्त परिवार प्रथा का अन्त, कुटीर-उद्योगों का अन्त, जनसंख्या में तीव्रगति से वृद्धि, किसानों की निर्धनता, किसानों की अज्ञानता आदि।

Scanned with CamScanner

समस्या का समाधान—खेतों के उप-विभाजन एवं विखण्डन की समस्या का एकमात्र हल 'खेतों की चकबन्दी' करना है। इसके अतिरिक्त अन्य उपाय भी प्रभावी सिद्ध हो सकते हैं; जैसे—सहकारी कृषि, उत्तराधिकार के कानूनों में परिवर्तन, शिक्षा का प्रसार, कुटीर उद्योगों का विकास आदि।

(2) **भूमि सुधारों के अभाव की समस्या**—यद्यपि देश में अधिकांश राज्यों ने भूमि सुधार से सम्बन्धित कानून पारित कर दिए हैं, परन्तु फिर भी उनमें अनेक कमियाँ हैं, जिनके कारण कृषकों का भूमि पर पूर्ण स्वामित्व आज भी नहीं हो पाया है। देश के प्रत्येक राज्य ने यद्यपि भूमि की अधिकतम सीमा निर्धारित कर दी है, परन्तु फिर भी अनेक व्यक्तियों ने विभिन्न विधियों द्वारा आज भी भूमि पर अपना एकाधिपत्य बना रखा है। इस प्रकार कानून की अवहेलना करने वाले व्यक्तियों में शक्तिशाली जमींदार व नेतागण प्रमुख हैं। इतना ही नहीं अनेक स्थानों पर कृषकों को उनकी भूमि से इसलिए बेदखल कर दिया जाता है क्योंकि उनके पास इतना धन नहीं है कि वे शक्तिशाली जमींदारों या व्यक्तियों से संघर्ष कर सकें। अतः आज भी भूमि पर अधिकार उन व्यक्तियों का नहीं है जिनका होना चाहिए।

समस्या का समाधान—इस समस्या का समाधान करने के लिए कानून में ऐसा परिवर्तन किया जाना चाहिए कि जो व्यक्ति खेती करता है, खेत पर उसका स्वतः ही अधिकार हो जाए तथा प्रभुत्वशाली व्यक्ति अपना प्रभाव सरकारी कर्मचारियों पर न डाल सकें।

अब लगभग समस्त राज्यों में कानून बनाकर यह व्यवस्था कर दी गई है कि बंजर और ऊसर भूमि को बाँटते समय भूमिहीन कृषकों को प्राथमिकता प्रदान की जाय।

(स) सामान्य समस्याएँ

(1) **कृषि पर जनसंख्या के बढ़ते हुए भार की समस्या**—भारत की 56.0% प्रतिशत जनसंख्या अपनी जीविका कृषि से ही चलाती है। भारत की जनसंख्या में प्रतिवर्ष लगभग 2.5 प्रतिशत की दर से वृद्धि हो रही है। जनसंख्या में वृद्धि के परिणामस्वरूप प्रति व्यक्ति के हिस्से में आने वाली भूमि का औसत भी घटता जा रहा है।

समस्या का समाधान—इस समस्या का हल करने के लिए देश में कुटीर-उद्योगों तथा अन्य उद्योगों का जाल बिछाया जाना चाहिए ताकि लोग खेती करने की ओर अधिक लालायित न हों। दूसरा उपाय जनसंख्या वृद्धि को कम करने का प्रयास किया जाना चाहिए। तृतीय उपाय यह है कि गहन खेती को प्रोत्साहित किया जाना चाहिए।

(2) **कृषकों की अकुशलता की समस्या**—भारत में कृषि की आज जो इतनी पिछड़ी हुई स्थिति है, इसका एक प्रमुख कारण भारत के कृषकों का अकुशल होना है। इस अकुशलता के अनेक कारण हैं; जैसे—कृषकों का अशिक्षित एवं अन्धविश्वासी होना, कृषकों का रोगग्रस्त रहना, उनकी ऋणग्रस्तता तथा उनका रूढ़िवादी, भाग्यवादी एवं अपव्ययी होना आदि।

समस्या का समाधान—कृषकों की अकुशलता को दूर करने के लिए अनेक उपाय किये जा सकते हैं; जैसे—शिक्षा का प्रसार, चिकित्सा की सुविधाओं में वृद्धि, ऋण प्राप्ति की उचित व्यवस्था करना तथा ज्ञान वृद्धि आदि करना।

(3) **भूमि की उर्वरा-शक्ति में ह्रास की समस्या**—भारत में प्रति हैक्टेयर उत्पादन बहुत कम है। इसका कारण है प्राचीन ढंग से कृषि करना तथा रासायनिक खादों का प्रयोग न करना।

समस्या का समाधान—भूमि की उर्वरा-शक्ति बढ़ाने के लिए निम्नलिखित उपाय किए जाने चाहिए—

(i) फसल चक्र को अपनाकर खेती करना।
(ii) कृत्रिम खाद का प्रयोग करके खेती करना।
(iii) खेती को परती छोड़कर।
(iv) भूमि-क्षरण को रोककर, एवं
(v) जलावरोध की समस्या को दूर करके।

(4) **खाद की समस्या**—भारत में कृषक रासायनिक खादों का प्रयोग ठीक प्रकार से नहीं कर पाते हैं। कृषकों द्वारा प्रायः तीन प्रकार की खादें प्रयोग की जाती हैं; जैसे—हरी खाद, गोबर की खाद तथा रासायनिक खादें। भारत कृषि प्रधान देश होते हुए भी कृषि में प्रयुक्त होने वाले गोबर और मूत्र का खाद के रूप में प्रयोग नहीं हो पाता है। गोबर, खाद का एक अच्छा रूप है किन्तु प्रायः इसका प्रयोग ईंधन के रूप में किया जाता है। रासायनिक खाद अत्यधिक महँगा पड़ता है, इसलिए कृषक आवश्यकतानुसार उसका प्रयोग नहीं कर पाता, रासायनिक खाद अनेक बार समय पर उपलब्ध भी नहीं हो पाता।

Scanned with CamScanner

समस्या का समाधान—गोबर के उपले बनाकर जलाने की प्रवृत्ति रोकी जानी चाहिए। ईंधन की समस्या हल करने के लिए लकड़ी व कोयले का प्रयोग किया जाना चाहिए। कुकिंग गैस का प्रयोग भी किया जा सकता है। रासायनिक खादों को सरकार द्वारा सस्ते मूल्य पर उपलब्ध कराने की व्यवस्था की जानी चाहिए।

(5) **उन्नत बीजों की समस्या**—भारतीय कृषक उत्तम बीजों का प्रयोग नहीं कर पाता है। इसके कई कारण हैं, कृषक को अच्छे बीज का ज्ञान नहीं होता तथा उत्तम बीजों की उपलब्धता भी सुनिश्चित नहीं है।

समस्या का समाधान—इस समस्या का समाधान यह है कि उत्तम बीजों का प्रचार सामुदायिक विकास केन्द्रों से किया जाये तथा सहकारी समितियों के माध्यम से अच्छे किस्म के बीज उपलब्ध कराये जायें। विभिन्न स्थानों पर बीज केन्द्र भी स्थापित किये जायें।

(6) **कृषि-विधि तथा कृषि-यन्त्रों की समस्या**—भारत में आज भी कृषक खेती करने की प्राचीन विधियों को ही अपना रहा है। इसका परिणाम यह होता है कि कृषक चाहे जितना भी परिश्रम क्यों न करें, अपने खेतों में अधिक पैदावार नहीं कर पाते हैं। अतः कृषि का यन्त्रीकरण करना आवश्यक है। भारतीय कृषक आज भी हल और बैल से ही कृषि करता है, जबकि देश में कृषि के अनेक आधुनिक उपकरण उपलब्ध होने लगे हैं। देश के किसानों का सम्पन्न वर्ग आज इन उपकरणों द्वारा ही कृषि कार्य करता है किन्तु देश का सामान्य किसान जो सही अर्थों में किसान है, कृषि के इन आधुनिक उपकरणों को जुटाने में अपनी आर्थिक कमजोरी के कारण सक्षम नहीं है। बड़े-बड़े बैंकों से इन उपकरणों के लिए मिलने वाला ऋण भी सामान्यतया उन किसानों को ही मिल पाता है जो आर्थिक दृष्टि से समृद्ध हैं।

समाधान—इस समस्या के समाधान के लिए भारत सरकार द्वारा ऐसी व्यवस्था की जानी चाहिए कि देश के अत्यधिक छोटे किसानों को आधुनिक कृषि उपकरण अत्यधिक सरल किश्तों पर उपलब्ध हो सकें। यदि सम्भव हो सके तो सरकार की ओर से भी कृषि के उन्नत उपकरण किसानों को वितरित किए जा सकते हैं।

(7) **विपणन की समस्या**—भारत में आज भी कृषि उपज के विपणन की व्यवस्था अत्यधिक दोषपूर्ण है। सामान्यतया अनेक बार कृषक अपनी अनिवार्य आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए अपनी फसल गाँव में ही बेच देता है, परिणामस्वरूप उसे बहुत कम मूल्य मिल पाता है। यद्यपि वर्तमान में कृषकों में अपनी फसल बेचने के प्रति और उसका उचित मूल्य प्राप्त करने के प्रति सजगता आई है किन्तु फिर भी देश का अधिकांश किसान स्थानीय स्तर पर अथवा गाँव के आस-पास लगने वाले मेलों में अपनी फसल बहुत कम मूल्य में बेच देता है। यदि कोई किसान नगर में स्थित गल्ला मण्डी तक अपनी फसल बेचने के लिए ले भी जाता है तो उसे दलालों, तोलने वालों, हम्मालों और अन्य ऐसे ही लोगों के शोषण का शिकार बनना पड़ता है। यद्यपि सरकार अब किसान का गल्ला खरीदने लगी है तो भी उसे अनेक समस्याओं का सामना करना पड़ता है। विपणन के क्षेत्र में जहाँ वर्ष 1950 के अन्त तक देश में 286 विनियमित मण्डियाँ थीं, वहीं वर्तमान समय में इसकी संख्या 7,521 है। इसके अलावा देश में 27,294 ग्रामीण नियतकालीन मण्डियाँ हैं जिनमें से 15 प्रतिशत विनियमन के क्षेत्र के अधीन कार्य करती हैं।

अतः आज आवश्यकता इस बात की है कि किसान को उसकी फसल का उचित मूल्य दिलाने के लिए सरकारी स्तर पर प्रयत्न किया जाना चाहिए। सरकार की ओर से विश्वसनीय और ईमानदार किसानों से फसल खरीदने का दायित्व सौंपा जाना चाहिए। यद्यपि भारतीय खाद्य निगम यह कार्य करता है किन्तु आज भी किसान को निगम की कार्य प्रणाली से सन्तुष्टि नहीं है।

Scanned with CamScanner